संतुलन प्रक्रिया के सिद्धांत
(Theories of Balancing Process)

किसी देश का भुगतान - संतुलन अल्पकाल में भले ही अनुकूल अथवा प्रतिकूल हो लेकिन अधिक समय तक न तो यह अनुकूल ही रह सकता है और न प्रतिकूल ही। दूसरे शब्दों में, किसी देश का असंतुलित अथवा असामान्य भुगतान - संतुलन अन्ततः साम्यावस्था में पहुँच जाता है। लेकिन अब यह प्रश्न है कि ऐसा किस प्रकार होता है अथवा इसकी प्रक्रिया (Mechanism) क्या है? इस संबंध में निम्नलिखित दो सिद्धांत हैं :-

(1) परम्परावादी सिद्धांत (Classical Theory) :- परम्परावादी सिद्धांत के अनुसार यदि किसी देश के भुगतान - संतुलन में घाटा (Deficit) उत्पन्न हो जाये, यानी उसका भुगतान संतुलन किसी दूसरे देश के संबंध में प्रतिकूल हो जाय तो वह अपने घाटे को दूर करने के लिए दूसरे देश में स्वर्ण अथवा प्रतिभूतियों (Securities) का निर्यात करेगा। इससे उस देश में यानि घाटा वाले देश (Deficit country) में मूल्य - स्तर तथा आय में कमी होगी और दूसरे देश यानि अधिक्य वाले देश (Surplus country) में मूल्य स्तर और आय में वृद्धि होगी अतः घाटा वाले देश की वस्तुएँ विदेशों में अब अपेक्षाकृत सस्ती हो जायेंगी। अब चूँकि अधिक्य वाले देश में आय में वृद्धि हुई है, अतः वह घाटा वाले देश से अधिक वस्तुएँ खरीदेगा जिससे घाटा वाले देश के निर्यात में वृद्धि होगी। लेकिन चूँकि घाटा वाले देश विदेशों से कम ही वस्तुएँ खरीदेगा यानि उसके आयात में कमी होगी। इस प्रकार घाटा वाले देश के निर्यात में वृद्धि एवं आयात में कमी होने के कारण उसमें निर्यात अधिक्य (Export Surpuls) का दूसरी ओर अधिक्य वाले देश में इसके विपरित प्रभाव पड़ेंगे चूँकि इस देश की आय में वृद्धि हो गई है तथा घाटा वाले देश की वस्तुएँ इसके लिए पहले से सस्ती हो गई है। अतः वह घाटा वाले देश से अब अधिक वस्तुएँ खरीदेगा यानि उसके आयात में वृद्धि होगी। पुनः चूँकि अधिक्य वाले देश में मूल्य बढ़ जाने से वस्तुएँ महँगी हो गई हैं तथा घाटा वाले देश में आय में भी कमी हो गई है अतः दूसरे देश और विशेषकर घाटा वाला देश उस देश से अब कम ही वस्तुएँ खरीदेगा। इससे अधिक्य वाले देश के निर्यात में कमी होगी। इस प्रकार अधिक्य वाले देश में आयात में वृद्धि तथा निर्यात में कमी होने के कारण आयात अधिक्य (Import

Page No.
Date:

Surplus) का सृजन होगा। इस प्रकार अन्ततः इस प्रक्रिया के माध्यम से अथवा मूल्य लागत ढाँचे (Price-cost structure) में परिवर्तन के माध्यम से भुगतान-संतुलन का असाम्य (Disequilibrium) समाप्त हो जायेगा और साम्यावस्था की स्थापना हो जायेगी।

(2) केन्स का सिद्धांत (Keynesian Theory) :- चूँकि परम्परावादी सिद्धांत की मान्यताएँ वास्तविक नहीं हैं अतः प्रो० केन्स (J.M Keynes) ने बताया है कि भुगतान-संतुलन में साम्यावस्था की स्थापना मूल्यों एवं लागतों के स्तर में परिवर्तन के माध्यम से न होकर आय के स्तर (Level of Income) में परिवर्तन के माध्यम से होती है। इसे हम एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं। मान लिया जाय कि जापान के साथ भारत के भुगतान-संतुलन में घाटा (Deficit) हुआ है। परम्परावादी सिद्धांत के अनुसार ऐसी अवस्था में साम्यावस्था की स्थापना तब होगी जब भारत अपने घाटे को दूर करने के लिए जापान को स्वर्ण का निर्यात करेगा जिससे भारत में मूल्यों एवं लागतों में कमी तथा जापान में मूल्यों एवं लागतों में वृद्धि होगी। लेकिन केन्स के अनुसार भारत तथा जापान के भुगतान-संतुलन में साम्यावस्था की सृष्टि मूल्यों एवं लागतों में वृद्धि होगी। इस प्रकार भारत के निर्यात में वृद्धि तथा आयात में कमी होने के कारण वह पहले की अपेक्षा कम वस्तुओं का आयात करेगा। इस प्रकार भारत के निर्यात में वृद्धि तथा आयात में कमी होने के कारण उसके भुगतान-संतुलन में अधिक्य (Surplus) का सृजन होगा जो पहले के घाटे (Deficit) अथवा आयात अधिक्य (Import Surplus) को समाप्त कर देगा। अतः केन्स के अनुसार प्रत्येक देश में आय व्यय की प्रतिक्रिया (Income-Expenditure Reactions) दूसरे देश के भुगतान संतुलन में साम्यावस्था की स्थापना करने में सहायक होती है।

यह सिद्धांत इस बात की व्याख्या करता है कि किस प्रकार साख के विस्तार अथवा संकुचन तथा बैंकिंग क्षेत्र में समायोजन के और आय के माध्यम से भुगतान-संतुलन में साम्य की सृष्टि होती होती है। यह सिद्धान्त इस बात की व्याख्या करने में समर्थ है कि बैंक द्वारा तटस्थकारी नीति (Neutralising Policy) अपनाये जाने पर भी किस प्रकार भुगतान संतुलन में समायोजन होता है।

Scanned with CamScanner